सतत् विकास लक्ष्य और 2015 के बाद विकास

सतत् विकास लक्ष्य और 2015 के बाद विकास

सतत् विकास लक्ष्य और 2015 के बाद विकास

फरवरी 2015
नई दिल्ली, भारत

संपादकः अजय कुमार झा

इस प्रकाशन का संपादक का हवाला देते हुए गैर वैव्सायिक उद्देश्यों के लिए पुनरुत्पादन किया जा सकता है।

कुछ मुख्य चिंताएँ

जून 2013 रियों में सतत् विकास की अंतर्राष्ट्रीय बैठक के बाद राष्ट्रसंघ के नेतृत्व में कई प्रक्रियाएँ चलाई गई जिसका मूल उद्देश्य था कि सामाजिक, आर्थिक और पर्यावरणीय विकास में सामंजस्य लाकर दुनिया में विकास को समावेशी, संतुलित और स्थायी बनाया जाए। इसमें सहस्त्राब्दी विकास लक्ष्य के एजेंडा को पूरा करने के लिए महत्वपूर्ण व्यक्तियों का पैनल, राष्ट्रसंघ के महासभा अध्यक्ष द्वारा चलाई गई बातचीत, सतत् विकास के धनार्जन के लिए बैठकें आदि महत्वपूर्ण रहीं। सबसे महत्वपूर्ण प्रक्रिया सतत् विकास लक्ष्य बनाने के लिए राष्ट्रसंघ द्वारा स्थापित मुक्त कार्य समूह (Open Working Group) की बातचीत रही। इस मुक्त कार्य समूह ने 13 महीने की बातचीत के बाद जुलाई 2014 में 17 लक्ष्य और 169 टारगेटों पर आधारित सतत् विकास लक्ष्य का प्रारूप पेश किया जिस पर 2015 में अंर्तसरकारी बातचीत से सहमति बनाई जाएगी और फिर सितंबर 2015 में राष्ट्रसंघ के सदस्य देशों को इसे अंगीकार करने को कहा जाएगा। मुक्त कार्य समूह में भारत सहित 133 देश थे।

सतत् विकास लक्ष्य का प्रयोजन

रियो बैठक का मुख्य संदेश था कि पिछले कुछ दशकों में विकास में आर्थिक पहलुओं को प्रधानता दी गई है और इसमें सामाजिक व पर्यावरणीय पहलुओं का समावेश नहीं हो पाया है, जिससे ग़रीबी में नियंत्रण नहीं हो पाया और पर्यावरण व प्राकृतिक संसाधनों पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है। इस उद्घाटन के प्रकाश में मुक्त कार्य समूह का मुख्य उद्देश्य दुनिया की अर्थव्यवस्था का रूपांतत्रण कर उसे समावेशी और पर्यावरण की दृष्टि से संवेदनशील बनाना था। दुनियाभर के लोगों में इस प्रक्रिया से यह उम्मीद थी कि यह आर्थिक विकास की प्रचलित और परंपरागत अवधारणा में आमूलचूल परिवर्तन लाकर विश्व के अत्यंत ग़रीब लोगों, देशों और समुदायों को विकास में शामिल करेगी और विकास को पुनः परिभाषित कर विकास और पर्यावरण में सामंजस्य स्थापित करेगी। कुछ ऐसा ही स्लोगन मुक्त कार्य समूह ने अपने प्रस्ताव को भी दिया और कहा कि उसका लक्ष्य है कि 'कोई भी विकास से अछूता न रहे', हालांकि अभी तक की प्रक्रिया ने इस विश्वास को झुठला दिया है।

क्या है सतत् विकास के लक्ष्य

एक तरह से देखें तो सतत् विकास के लक्ष्य बहुत विस्तृत और दूरगामी

परिणामों वाले लगते हैं। लक्ष्यों ने तक़रीबन सभी आर्थिक, सामाजिक और पर्यावरणीय पहलुओं को छुआ है। इसमें ग़रीबी उन्मूलन, भूख को ख़त्म करना और स्थायी कृषि, स्वास्थ्य, जल एवं स्वच्छता, महिला सशक्तीकरण, ऊर्जा, आर्थिक विकास और रोज़गार, सुदृढ़ अधिसंरचना, स्थायी औद्योगीकरण, असमानता, स्थायी शहरीकरण, स्थायी खपत व उत्पादन, जलवायु परिवर्तन, समुद्रों और समुद्री पारिस्थितिकी का उचित उपयोग, स्थल पारिस्थितिकी, वन और जैव विविधता, शांतिपूर्ण समाज और न्याय तक पहुँच इत्यादि हैं। सभी लक्ष्यों के साथ कार्यान्वयन के आवश्यक साधन जैसे वित्त, व्यापार, तकनीक, संस्थागत मुद्दे आदि की भी चर्चा है। 17वाँ लक्ष्य भी कार्यान्वयन के साधन की उपलब्धता पर है। साधन में एक महत्वपूर्ण भूमिका आँकड़ों की भी है। सभी लक्ष्यों के साथ टारगेट दिए गए हैं और इन लक्ष्यों और टारगेट के आधार पर मानक बनाए जाएँगे जिससे कि लक्ष्य की प्रप्ति को मापा जा सकेगा। ऐसी अपेक्षा है कि इन मानकों के आधार पर सदस्य देश अपनी राष्ट्रीय परिस्थतियाँ, प्राथमिकता और आवश्यकता के अनुसार राष्ट्रीय लक्ष्य, टारगेट, और मानक बनाएँगे और लागू करेंगें।

सतत् विकास लक्ष्य, सहस्त्राब्दी विकास लक्ष्यों (एमडीजी) से कैसे भिन्न है

सतत् विकास लक्ष्य सहस्त्राब्दी विकास लक्ष्यों से इन मायनों में भिन्न है कि विकास लक्ष्य वैश्विक हैं जबकि सहस्त्राब्दी विकास लक्ष्य सिर्फ विकासशील व ग़रीब देशों में लागू किए गए थे। विकसित देशों की ज़िम्मेदारी सिर्फ आर्थिक संसाधन जुटाने और तकनीकी सहायता जुटाने में थी। सहस्राब्दी विकास लक्ष्यों का परिणाम मिश्रित रहा। जहाँ कुछ देशों में गरीबी कम करने, शिक्षा का स्तर बढ़ाने खासकर बालिका शिक्षा, महिलाओं के सशक्तीकरण इत्यादि में खासी प्रगति रही। लेकिन ज्यादातर देशों में परिणाम इतने उत्साहजनक नहीं रहे। हालांकि कुल मिलाकर यही कहा जा सकता है कि इसकी उपलब्धि असमान व अपर्याप्त रही। एमडीजी के लक्ष्यों में सबसे कमज़ोर कड़ी अंतर्राष्ट्रीय भागीदारी रही जिसमें विकसित देश अन्य देशों को (मांटेरी सहमति प्रतिबद्धता के अनुसार) सकल घरेलू आय का 0.7 प्रतिशत देने में असफल रहे। हालांकि कुछ देशों ने बेहतर प्रयास किए और कुछ देशों और क्षेत्रों को अधिक आर्थिक सहायता उपलब्ध हुई। लेकिन 2014 तक वैश्विक स्तर पर यह सहायता सर्वाधिक 0.3 प्रतिशत तक ही पहुँची। वैश्विक भागीदारी के अभाव में इसके परिणाम व उपलब्धियां अप्रत्याशित

रही हैं। हालांकि एमडीजी के संदर्भ में सबसे अच्छी बात इन लक्ष्यों का प्रचार–प्रसार, राजनैतिक स्तर पर इसके लिए वैश्विक समर्थन और सामाजिक व संस्थाओं की उत्साहजनक भागीदारी रही।

सतत् विकास लक्ष्य एमडीजी से बेहतर हैं लेकिन एक बड़े वैश्विक समुदाय की समझ से आवश्यक रूपांतरण और बदलाव लाने में सक्षम नहीं हैं अतः नाकाफी और निराशाजनक हैं। दुनिया में लोगों का मानना है कि राजनैतिक और अन्य प्रभावों में यह लक्ष्य टिकाऊ विकास के बदले कामचलाऊ व्यवस्था होगी।

लक्ष्यों में अच्छा क्या है?

लक्ष्य प्रगतिशील हैं ख़ासकर एमडीजी की तुलना में। यह लक्ष्य वैश्विक हैं और दुनिया के सभी देशों में लागू किए जाएँगे। यह उल्लेखनीय है कि पहली बार ऐसी वैश्विक सहमति सतत् विकास पर बनी है और सभी देशों का योगदान अपेक्षित है। स्थायित्व आज हरेक देश की चिंता है और सब देश मिलकर ग़रीबी और भूख को खत्म करने, स्वास्थ्य सुधार, आर्थिक विकास को समावेशी और पर्यावरण के अनुसार संवेदनशील बनाने का प्रयास करेंगे, यह काफी प्रोत्साहक है। इसमें महिला सशक्तीकरण व लैंगिक समानता, शहरों को समावेशी व स्थायी बनाने, औद्योगीकरण का लोगों और पर्यावरण पर प्रतिकूल प्रभाव कम करने के लिए कदम, कम खपत और उत्पादकता वाली जीवनशैली अपनाने और समुद्री व स्थल पारिस्थितिकी, वन और जैव विविधता संरक्षण के अलावा व्यापार के नियम को विकासशील और ग़रीब देशों की आवश्यकतानुसार संगत करना इत्यादि महत्वपूर्ण लक्ष्य हैं। लक्ष्य अमीर देशों में जीवाश्म ईंधन और कृषि निर्यात पर सब्सिडी कम करने, अंतर्राष्ट्रीय आर्थिक व वित्तीय संस्थाओं में विकासशील देशों का पक्ष मज़बूत करने, अवैध वित्तीय प्रवाह को रोकने और प्रवासियों को अपने देश घर भेजने पर ख़र्च को कम करने के प्रशंसनीय लक्ष्य भी हैं। हालांकि ऐसे सराहनीय उद्देश्यों के बाद भी क्या सतत् विकास लक्ष्य दुनिया को स्थायित्व देने में सक्षम हैं? क्या यह लक्ष्य विकास को समावेशी बनाएंगे? क्या यह प्रकृति पर विकास के प्रतिकूल प्रभाव को कम करेंगे? ये कुछ बड़े सवाल हैं। कई लोगों का सवाल यह भी है कि क्या सतत् और निरंतर विकास संभव है?

विकास लक्ष्यों में क्या निराशाजनक है?

सतत् विकास लक्ष्य समकालीन मूल समस्याओं जैसे कि वैश्विक आर्थिक, वित्तीय और व्यापार की संरचनाओं में मूलभूत परिवर्तन की आवश्यकता को नज़रअंदाज करते हैं जिसके बिना दुनिया से भूख, ग़रीबी, गैर बराबरी दूर करना मुश्किल है। बहुत लोगों का मानना है कि इन समस्याओं की जड़ नवउदारवाद को बढ़ाने वाली पूंजीवादी व्यवस्था है और इन व्यवस्थाओं और संस्थाओं के आमूल परिवर्तन के बिना दुनिया में स्थायित्व लाना असंभव है। यह व्यवस्थाएं श्रम और प्राकृतिक संसाधनों के अत्यधिक दोहन से मुनाफ़ा कमानेवाली प्रवृति पर आधारित है। पिछले कई दशकों में इसके निर्विवाद परिणाम मिले हैं। ऐसी प्रवृत्तियों के फलस्वरूप आज दुनिया में 85 सबसे धनी लोगों के पास आधी आबादी के बराबर धन है। इसी वजह से विकास लक्ष्यों में जहाँ विकासशील और अल्पविकसित देशों से अंतर्राष्ट्रीय जवाबदेही लेने को मज़बूर किया जा रहा है, विकसित देश अपनी जीवनशैली को बरक़रार रखना चाहते हैं और उनकी जवाबदेही सिर्फ अपने तक ही सीमित है। जिन व्यवस्थाओं से दुनिया की यह दुर्गति हुई है, सामाधान भी उसी व्यवस्था में ढूँढना कोई क्रांतिकारी कदम नहीं है, छोटी–मोटी फेरबदल या रफू से यथास्थितिवाद को बनाए रखने से शायद स्थायित्व लाना असंभव होगा।

अगर हम लक्ष्यों को आज की आवश्यकता के अनुसार देखें तो यह बहुत कम महत्वकांक्षी हैं। ग़रीबी रेखा को सिर्फ़ आय के हिसाब से परिभाषित करना और 1.25 अमरीकी डॉलर से ऊपर आय वाले व्यक्ति को ग़रीबी से बाहर रखना, गरीबी की अपर्याप्त समझ दिखाता है और इससे ग़रीबी उन्मूलन शायद ही संभव दिखता है। ग़रीबी के साथ गैर बराबरी अभी दुनिया में सबसे बड़ी समस्या है और इसके ऊपर प्रावधान (ख़ासकर देशों के बीच गैर बराबरी) बहुत ही लचर है। महिला सशक्तीकरण और लैंगिक असमानता पर कोई समयबद्ध टारगेट नहीं है जिसकी वजह से यह भी बहुत कमजोर लक्ष्य है। खासकर यौन और प्रजनन संबंधी अधिकार पर भी काफ़ी प्रतिरोध है। आज की सर्वाधिक चर्चित समस्या जलवायु परिवर्तन पर सतत् विकास लक्ष्य प्रक्रिया बहुत ही कमजोर साबित हुई। सारा दारोमदार फ्रेमवर्क कन्वेंशन की बातचीत और उसके निष्कर्ष पर छोड़ दिया गया है। पेरिस की बैठक में दिसंबर में एक वैश्विक समझौता होने वाला है, उससे दुनियाभर में वैसे ही बहुत कम अपेक्षा है और शायद ही कोई यह विश्वास कर रहा है कि विज्ञान की आवश्यकताओं के अनुरूप और विकासशील देशों के हित में कोई संधि होगी। इससे कोई बड़ी अपेक्षा रखना अब बेमानी होगा। जलवायु

परिवर्तन के संदर्भ में सबसे ज़रूरी यह है कि विकसित देश ऊर्जा का अपव्यय बंद करें और खपत और उत्सर्जन कम करें। लक्ष्यों में ऐसा कोई निर्देश न होना काफ़ी निराशाजनक है।

कार्यान्वयन के साधनों पर वैश्विक प्रतिबद्धता

कार्यान्वयन के साधन की कमी सहस्त्राब्दी विकास लक्ष्यों की सबसे कमज़ोर कड़ी थी। सतत् विकास की प्रक्रिया में भी इसपर वैश्विक प्रतिबद्धता में संदेह है। विकास को स्थायी और समावेशी बनाने के लिए और कम काबर्न वाली विकास की दिशा अपनाने के लिए विकासशील, ग़रीब व द्वीपीय देशों की आर्थिक आवश्यकता हर साल बढ़ती जा रही है। उन्हें अवश्य ही अतिरिक्त और उम्मीद के मुताबिक एक स्थायी और दीर्घकालिक आर्थिक सहायता चाहिए, जो कि लक्ष्यों में कहीं नहीं दिखती। आर्थिक संसाधन व तकनीक उपलब्ध कराने के लिए विकासशील देशों को आपस में सहयोग और निजी निवेशकों और बाजार के भरोसे छोड़ दिया गया है। धनी देशों की प्रतिबद्धता सिर्फ मांटेरी सहायता को लागू करके उनके सकल घरेलू आय का 0.7 प्रतिशत उपलब्ध कराने तक ही सीमित है। निश्चित ही यह नाकाफ़ी है। सभी लक्ष्यों में संसाधन उपलब्ध कराने पर निजी कंपनियां और निवेशकों की प्रधानता पूरी प्रक्रिया में उनके प्रभाव को दर्शाती है और शायद विकास में उनकी मुनाफ़ाखोरी को वैधता देने की कोशिश है।

सतत् विकास पर राजनीति

सतत विकास की पूरी प्रक्रिया में वहीं राजनीति है जो कि छोटे देशों को अभी तक ग़रीब और शक्तीहीन रखना चाहती है। विकसित देशों के पास आर्थिक संसाधन, तकनीक और राजनैतिक शक्ति है। उन्होंने औद्योगीकरण के समय से लेकर अब तक अधिक कार्बन स्पेस इस्तेमाल किया है, और अब जब छोटे देशों की विकास की बारी आई है तो वो यह कार्बन स्पेस उनके साथ साझा नहीं करना चाहते। इस मूल कारण से कई मुद्दे पूरी चर्चा में खासे विवादास्पद रहे और विकसित और विकासशील देशों के बीच एक गहरी खाई दिखी जिसे एक नए राजनैतिक नज़रिये के बिना पाटा नहीं जा सकता।

सार्वभौमिकता बनाम एकरूपता

एक बड़ी बहस सार्वभौमिकता बनाम एकरूपता है। जहाँ विकसित देशों का मानना है कि लक्ष्य सभी राष्ट्र देशों के लिए समान रूप से लागू हों, विकासशील और छोटे देशों का मत है कि सार्वभौमिकता का मतलब यह

नहीं है कि लक्ष्य सभी देशों में समान रूप से लागू किए जाएँ। इसमें विकसित देशों को अधिक ज़िम्मेदारी लेनी पड़ेगी। उनके अनुसार आर्थिक, सामाजिक और विकास के पड़ाव पर पृथक देशों में समान रूप से कोई कानून लागू करना समानता के सिद्धांत का उल्लंघन है और विकासशील व ग़रीब देशों को अपनी राष्ट्रीय परिस्थितियों, प्राथमिकताओं और नीतियों के हिसाब से विकास परिचालन की छूट होनी चाहिए।

समान लेकिन प्रथक उपचार

इसी से जुड़ा हुआ मुद्दा ''समान लेकिन पृथक उपचार'' (Common but Differentiated Responsibility based on Respective Capability) का है। विकासशील देशों का मानना है कि वैश्विक विकास के लिए रियो पृथ्वी सम्मेलन की सहमति के अनुसार (1992) यह एक महत्वपूर्ण सिद्धांत है जिसका अर्थ है कि सभी देश समान ज़िम्मेदारी लेंगे लेकिन विकसित, धनी और औद्योगीकृत देशों को आर्थिक संसाधन तकनीक, क्षमतावर्द्धन इत्यादि संसाधनों में वैश्विक भागीदारी को नेतृत्व प्रदान करना होगा। वैश्विक विकास की कोई भी बहस इस सिद्धांत का अनदेखा नहीं कर सकती है। इससे उलट विकसित देशों का मत है कि ''समान लेकिन पृथक उपचार'' पर्यावरणीय मुद्दों पर ही लागू होता है। समकालीन स्थिति में और विकास की सभी बहसों में इसे लागू करना संभव नहीं है। उनका यह भी मानना है कि विकसित और विकासशील देशों को विभेद के लिए अब कोई नया फ़ार्मूला बनाना होगा। और इसके बिना कोई सहमति संभव नहीं है। ख़ासकर अमरीका इस सिद्धांत के सख़्त ख़िलाफ़ है।

जलवायु परिवर्तन

लक्ष्यों पर बातचीत में जलवायु परिवर्तन सबसे चर्चित मुद्दा रहा। विकसित देशों में अमरीका और विकासशील देशों में भारत व चीन इत्यादि जलवायु परिवर्तन पर कोई लक्ष्य नहीं चाहते थे। उनका कहना है कि इस पर लक्ष्य रखने से अधिक ज़िम्मेदारी विकासशील देशों पर आएगी और इसके बजाय जलवायु परिवर्तन के कारकों जैसे ईंधन, औद्योगीकरण, कम खपत और उत्पादन जीवनशैली इत्यादि पर कड़े निर्देश रखे जाएँ। अमरीका उत्सर्जन कम करने पर किसी प्रतिबद्धता के पक्ष में नहीं हैं और इसलिए जलवायु परिवर्तन पर कोई लक्ष्य रखने के ख़िलाफ़ है। अभी इस पर बात यह कह कर टाल दिया है कि फ़्रेमवर्क कन्वेंशन जलवायु इत्यादि पर बातचीत के लिए बेहतर और प्राथमिक व्यवस्था है और इसके निर्णय सभी के लिए मान्य होंगे।

न्यायपूर्ण व्यवस्था व शांतिपूर्ण और समावेशी समाज

एक बड़ा विवाद लक्ष्य 16 पर भी है जिसका शीर्षक न्यायपूर्ण व्यवस्था (Rule of Law) से बदलकर ''शांतिपूर्ण व समावेशी समाज, न्याय तक पहुँच और समावेशी संस्थाएँ'' कर दिया गया है। कई विकासशील देशों (भारत और चीन) और संघर्ष की स्थिति में अरबी देशों ने इस पर कड़ी प्रतिक्रिया दी और कहा कि न्यायपूर्ण व्यवस्था का विषय सतत् विकास से नहीं जुड़ा है और यह सामान्यतः अंतर्राष्ट्रीय विवादों का विस्तार है। इसके अतिरिक्त उनका यह भी मानना है कि इस लक्ष्य को छोटे, राजनैतिक रूप से अस्थिर देशों के खिलाफ, उन पर आक्रमण, नियंत्रण और उनकी राजनैतिक और भौगोलिक सम्प्रभुता के ख़िलाफ किए जाने की प्रबल संभावना है। फिलहाल बदले हुए शीर्षक और लक्ष्यों से सभी देश कमोबेश सहमत हैं। ग़रीब और गैर बराबरी की परिभाषा और उसके उपचार के लक्ष्य भी काफी विवादित रहे और विकसित और विकासशील देशों में इनपर काफ़ी खींचतान देखी गई। और इसके अलावा यौनिक और प्रजनन संबंधी अधिकार भी खासे विवादित रहे। भारत सहित कई विकासशील देश, और मुस्लिम बहुल और अरबी देश इसके खिलाफ रहे। इनके अनुसार उन देशों में महिलाओं के लैंगिक व प्रजनन संबंधी व्यवस्थाओं को महिलाओं के अधिकार के रूप में संज्ञान नहीं लिया जाता है और ऐसे अधिकार लागू करना धार्मिक और सामाजिक प्राथमिकताओं में नहीं है।

कार्यान्वयन के साधन और अंतर्राष्ट्रीय प्रतिबद्धता में कमी

सबसे बड़ा बहस का मुद्दा आर्थिक संसाधन रहा। विकसित देश इस पर थोड़ी बातचीत करके बिना कोई प्रतिबद्धता दिखाए निकलना चाहते हैं और ज़्यादा ज़िम्मेदारी विकास के लिए धनार्जन की तीसरी बैठक (Financing For Development) जो कि जुलाई 2015 में होगी, पर डालना चहते थे। विकासशील देश न कि केवल कार्यान्वयन के साधन पर एक अलग लक्ष्य चाहते हैं बल्कि हर एक लक्ष्य को संसाधन से जोड़ना चाहते हैं। संप्रति कार्यान्वयन के साधन पर एक लक्ष्य (लक्ष्य 17) के अलावा सभी लक्ष्यों में साधन पर कुछ टारगेट रखे गए हैं। इसके बावजूद भी कार्यान्वयन के साधन के लक्ष्य अत्यंत कमज़ोर हैं। इसमें ओडीए को सशक्त करने और आईपाआर में प्रावधानों को ग़रीब देशों को वैश्विक व्यापार संगठन की दोहा बातचीत के तहत छूट देने से आगे और काई भी बातचीत नहीं हुई है। विकसित देशों का मत है कि अब अंतर्राष्ट्रीय भागीदारी का स्वरूप बदल रहा है और इसमें दक्षिण देशों में आपसी सहयोग, बाज़ार और निजी कंपनियों की सर्वाधिक महत्वपूर्ण

भूमिका है। ऐसी स्थिति में सतत् विकास लक्ष्यों के कार्यान्वयन में आशातीत प्रगति की अपेक्षा शायद बेमानी होगी।

नेतृत्व किसकाः राष्ट्रसंघ या सदस्य देश

पूरी प्रक्रिया में दबे रूप से एक और विवादित पक्ष है, प्रक्रिया में नेतृत्व किसका है, राष्ट्रसंघ या सदस्य देशों का? जहाँ राष्ट्रसंघ का मानना है कि इस चर्चा में दुनिया की सभी समस्याओं का समाधान ढूँढना व्यर्थ है। इनके अनुसार लक्ष्य ऐसे हों जो कि राजनैतिक रूप से विवाद रहित हों, जिससे पूरी दुनिया में उसका सफल परिचालन हो पाए। राष्ट्रसंघ की इच्छा परिणाम को अधिकतर 10 लक्ष्यों तक सीमित करने की थी जिससे वह सहस्त्राब्दी विकास लक्ष्यों की तरह 'एक पोस्टर' पर आ जाए और लोगों की स्मृति में आसानी से समा जाएं। इस प्रक्रिया से संबंधित कई उच्चाधिकारियों का यह मानना है कि विकास लक्ष्यों को एक बेहतर 'communication Tool ' बनाया जाए जो कि ई–संवाद (internet, twitter, facebook etc.) के लिए अधिक सुविधाजनक हो। राष्ट्रसंघ के अनुसार एमडीजी पर वैश्विक सहमति इतनी आसानी से इसलिए बन पाई थी क्योंकि वह प्रयास राष्ट्रसंघ के नेतृत्व में था और सतत् विकास लक्ष्यों पर सहमति बनाना मुश्किल हो रहा है क्योंकि इसमें सदस्य देश नेतृत्व करना चाहते हैं और हरेक देश अपनी बात मनवाना चाहते हैं। सदस्य देश ख़ासकर विकासशील देश इस प्रक्रिया को विकास के समकालीन समस्याओं और अवरोधों को दूर करने के एक अवसर के रूप में देख रहे हैं और इसलिए पूरी प्रक्रिया सदस्य देशों की इच्छानुसार और उनके नेतृत्व में हो, ऐसा चाहते हैं। नेतृत्व की इच्छा सहस्त्राब्दी विकास लक्ष्यों में राष्ट्रसंघ के नेतृत्व के अनुभव से भी उत्पन्न होती है जिसमें राष्ट्रसंघ विकसित देशों की यथासंभव भागीदारी सुनिश्चित करने में सर्वथा असफ़ल रहा।

पूरी प्रक्रिया के दौरान विकासशील देशों ने स्पष्ट रूप से कहा कि आगे की बातचीत सदस्य देशों द्वारा दिए गए मुक्त कार्य समूह के प्रस्ताव के आधार पर ही हो और इसमें कोई व्यवधान इन्हें स्वीकार्य नहीं होगा। हालांकि ऐसा प्रतीत होता है कि राष्ट्रसंघ का लक्ष्यों को सीमित करने पर राजनैतिक प्रयास जारी हैं। 4 सितंबर 2014 को राष्ट्रसंघ के महासचिव द्वारा पूरी प्रक्रिया पर एक संश्लेषण रिपोर्ट जारी की गई जिससे कि काफ़ी भ्रम पैदा हुआ। रिपोर्ट का शीर्षक '2020 तक सम्मान के लिए पथ; ग़रीबी उन्मूलन, सभी के जीवन का रूपांतरण और पृथ्वी की सुरक्षा' (The Road to Dignity by 2030; Ending Poverty, Transforming All Lives and Protecting the Planet)। इस रिपोर्ट में सभी लक्ष्यों को 6 समूहों में – सम्मान, लोग, पृथ्वी, भागीदारी, न्याय और

समृद्धि – में संयोजित कर दिया। हालांकि इस पर कई देशों ने प्रतिक्रिया देते हुए कहा कि लक्ष्यों का इन समूहों में समायोजन उचित नहीं है और इससे बहुत सारे लक्ष्यों की अनदेखी हुई है। संस्थाओं ने कई ख़ामियाँ गिनाते हुए कहा कि विकासशील देशों में सबसे महत्वपूर्ण लक्ष्यों जैसे गैर बराबरी और कार्यान्वयन के साधन पर यह रिपोर्ट बहुत निराशाजनक है। इस बात पर भी अटकलें लगीं कि अब आगे की प्रक्रिया इस रिपोर्ट के अनुसार होगी या सदस्य देशों द्वारा दिए गए लक्ष्यों के प्रस्ताव पर हालांकि रिपोर्ट में ही महासचिव ने यह स्पष्ट किया है कि आगे की चर्चा सदस्य देशों के दिए गए प्रस्ताव पर ही होगी, फिर इस संश्लेषण रिपोर्ट निकालने का प्रयोजन बहुतों को समझ नहीं आया।

आगे क्या होगा?

2015 में जनवरी से सितंबर तक कई बैठकें प्रस्तावित हैं। जनवरी से जून तक मुख्य मुद्दों, जून–जुलाई में अंर्तसरकारी सहमति बनाने के लिए बातचीत और सितंबर में विकास लक्ष्यों के मसौदे को परिणामरूप देने की अपेक्षा है। जनवरी में सदस्य देशों ने अब तक की बातचीत की समीक्षा की। फ़रवरी में घोषणापत्र पर बातचीत हुई। मार्च 2015 में लक्ष्यों पर बातचीत, अप्रैल में कार्यान्वयन के साधन, मई में लक्ष्यों का फ़ॉलोअप और समीक्षा और जून जुलाई में परिणाम दस्तावेज़ पर अंर्तसरकारी चर्चाएँ होंगी। ज्यादातर देशों का मानना है कि अब लक्ष्यों को चर्चा के लिए नहीं खोला जाएगा और लक्ष्यों के संदर्भ में चर्चा सिर्फ़ सूचकों तक ही सीमित रहेगी। अधिक चर्चा संसाधनों, और लक्ष्यों के परिचालन और समीक्षा के लिए व्यवस्था बनाने पर रहेगी। इन चर्चाओं में मुख्य भूमिका सरकारों की है गैर सरकारी संस्थाओं इत्यादि के लिए कुछ छोटे अवसर हैं। चर्चाओं का निष्कर्ष राष्ट्रसंघ की आमसभा में सितंबर में होगा जिसमें महासचिव ने सतत् विकास लक्ष्यों पर एक विशिष्ट बैठक रखी है।

भारत सरकार से क्या अपेक्षा है?

भारत सरकार ने अभी तक सतत् विकास से संबंधित कई पक्षों पर ख़ासकर गरीबी, ग़ैर बराबरी, खाद्य सुरक्षा, कम खपत और उत्पादन जीवनशैली, कार्यान्वयन के साधन इत्यादि पर मज़बूती से अपना पक्ष रखा है। हमारी अपेक्षा है कि सरकार इन मुद्दों पर आगे भी कोमलता नहीं दिखाएगी और विकासशील देशों का पक्ष मज़बूत करेगी। आगे की बातचीत में विकसित देशों और ख़ासकर अमरीका द्वारा इस प्रतिरोध को तोड़ने के लिए प्रलोभन की आशंका से इन्कार नहीं किया जा सकता है, ऐसी परिस्थिति में भारत के लिए छोटे विकासशील देशों के साथ

एकजुटता मज़बूत करनी चाहिए। इसके अतिरिक्त भारत ने कुछ विषयों ख़ासकर यौन और प्रजनन स्वास्थ्य संबंधी अधिकारों और जलवायु परिवर्तन पर अपना प्रतिरोध दिखाया है। यह भारत की राष्ट्रीय नीतियों में भी इन विषयों पर गंभीरता की कमी का परिचायक है। इन मुद्दों पर कम से कम राष्ट्रीय स्तर पर भारत सरकार को गंभीरता से सोचना होगा और लचीला रुख अपनाना होगा। भारत द्वारा विकासशील देशों के नेतृत्व का स्वागत करते हुए हमे शायद यह ध्यान देने की आवश्यकता है कि भारत की स्थिति छोटे विकासशील देशों से पृथक है और नेतृत्व तभी सम्माननीय होगा जब राष्ट्रीय स्तर पर भी इन मुद्दों पर भारत एक उदहारण पेश करे।

सतत् विकास की बातचीत अभी तक राष्ट्रसंघ और न्यूयार्क के स्तर पर ही रही है। देश में ऐसी चर्चाओं की कोई प्रतिध्वनि नहीं हुई है। भारत जैसे देश को इन दीर्घकालिक प्रभाव वाले विषयों पर बातचीत को बढ़ावा देकर एक राष्ट्रीय सहमति बनाने की आवश्यकता है। ऐसी बातचीत में सभी समुदायों से बातचीत एक सराहनीय प्रयास होगा। राज्यों के स्तर पर भी ऐसी बातचीत स्वागत योग्य होगी। इसके अलावा क्षेत्रीय सरकारों से भी इन विषयों पर बातचीत से एकमत बनाना राजनैतिक रूप से सर्वथा अपेक्षित है। हाल के वर्षों में कई अंतर्राष्ट्रीय मुद्दों पर भारत अलग–थलग दिखाई पड़ा है। क्षेत्रीय देशों से सौहार्द्रपूर्ण बातचीत और सहमति भारत की स्थिति को सशक्त करेगी। इन विषयों पर शायद ही संसद में चर्चा होती है और अपना मत बनाना और रखना कैबिनेट का विशेषाधिकार समझा जाता है, लेकिन समय–समय पर संसद को भारत सरकार की स्थिति समझाना और संसद की सहमति लेना भारत के संघीय ढाँचे को और मज़बूत और पारदर्शी बनाने में सहायक होगा।